परिचय - वेद आर्य धर्म का मूल है। उसमें समस्त ज्ञान भरा हुआ है। चारों वर्ण, तीनों लोक, चारों आश्रम, भूत, वर्तमान और भविष्य, इन सबका पूरा ज्ञान वेदों से होता है। वेद के विषय में सबसा पहला प्रश्न यह है कि वेद किसको कहते हैं? "वेद" शब्द का व्याकरण सिद्धान्त शास्त्रीय अर्थ 'ज्ञान' है क्योंकि 'वे' शब्द की व्युत्पत्ति ज्ञानार्थक 'विद्' धातु से है। अतः वेद पद का अर्थ है 'ज्ञान'। 'ज्ञान' शब्द व्यापक अर्थ का प्रतिपादक है। इसमें आध्यात्मिक विद्या के अतिरिक्त इतिहास भूगोल, गणित, विज्ञान आदि सभी विद्याओं का अर्थ समावेश हो जाता है। पर वेद पद के ज्ञान का अर्थ मुख्यतः आध्यात्मिक ज्ञान ही है। वेद शब्द हमें उस ईश्वरीय ज्ञान की ओर अभिप्रेरित करता है जो हिन्दु धर्म की परम्परा के अनुसार जिसके पहले-पहल ऋषि-मुनियों ने खोजा अथवा जिनमें उन्होंने साक्षात्कार किया था। अतः यह स्पष्ट है तपः पूत ऋषि-महर्षियों द्वारा इष्ट ज्ञान ही वेद शब्द का अभिप्रेत अर्थ हो।

इस प्रकार वेद का शाब्दिक अर्थ ज्ञान है और वेदों का उद्देश्य अपने समय का समस्त ज्ञान-विज्ञान को स्पष्ट करना था। अतः हम भारत के सभी शास्त्रों अर्थात् भारतीय साहित्य, दर्शन व जीवन का बीज वेदों में ही पाते हैं तथा संसार की प्राचीनतम रचनाएँ होने के कारण 'वेद' आदि मानव संस्कृति के अन्वेषण के लिए

5 August Monday

बहुमूल्य भी है। वेद न केवल हिन्दुओं एवं भारतीयों के लिए ही सर्वस्व है अपितु विश्व के अन्यान्य धर्मावलम्बियों के लिए भी अत्यधिक उपादेय और महत्वपूर्ण है।

वेद के ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद, ये चार भाग माने जाते हैं। इनके लिए ही ऋक् संहिता, यजुः संहिता, साम संहिता और अथर्ववेदसंहिता ये नाम प्रसिद्ध हैं। प्रत्येक वेद के विषय में कुछ जानने से पहले वेदों की शाखाओं के बारे में थोड़ा विचार कर लेना आवश्यक है। प्रत्येक वेद की अनेक शाखाएँ मानी जाती हैं। इन शाखा-भेद का क्या अभिप्राय है? इस विषय में प्रायः भ्रान्त धारणाएँ फैली हुई हैं। पर प्रत्येक वैदिक जानता है कि उसका किस वेद की किस शाखा से सम्बन्ध है। वह यह भी जानता है कि उसकी शाखा में प्रचलित वेद-संहिता का पाठ अपने ही वेद की अन्य शाखा से संकलित संहिता के पाठ से कुछ ही अंशों में भिन्न है। इसलिए यह स्पष्ट है कि वेदों का शाखा-भेद, बहुत अंश तक किसी भी प्राचीन ग्रंथ के समान, पाठ-भेद पर ही आधार रखता है।

स्वरूप, विषय-वस्तु और महत्त्व

ऋग्वेद-संहिता :- वैदिक संहिताओं में ऋग्वेद सर्वाधिक प्राचीन और सबसे बड़ी है। मैक्समूलर ने तो उसे आर्य जाति के मनुष्य द्वारा कहा गया पहला शब्द बतलाया है।

6 August Tuesday

ऋग्वेद के अन्त अन्य तीनों वेदों में उपलब्ध होते हैं और सामवेद तो पूरा का पूरा ऋग्वेद के मन्त्रों से ही बना हुआ है अतः चारों संहिताओं से ऋग्वेद की प्राचीनता सिद्ध हो जाती है। कहा जाता है कि ऋग्वेद एक ग्रंथ न होकर विशालकाय ग्रंथ-समूह है और भाषा व अर्थ की दृष्टि से भी वह एक ही ऋषि की रचना नहीं है तथा विभिन्न ऋषियों द्वारा विभिन्न कालों में की हुई रचना है।

ऋक् या ऋचा हूबहू मंत्रों को कहते हैं। इन ऋचाओं अथवा मंत्रों के संकलन को संहिता कहते हैं। महाभाष्य जैसे प्राचीन ग्रंथ में (लगभग 150 ई० पूर्व) कहा गया है कि ऋग्वेद की 21 शाखाएँ थीं। पौराणिक ग्रंथों में केवल पाँच शाखाओं का उल्लेख मिलता है। शाखाओं की इस कमी का कुछ कारण अध्ययन और अध्यापन की कमी हो सकता है। आजकल जो ऋग्वेद-संहिता प्रचलित है उसका सम्बन्ध 'शाकल शाखा' से है। ऋग्वेद के दो प्रकार के विभाग उपलब्ध होते हैं—

1. अष्टक, अध्याय और सूक्त तथा 2. मण्डल अनुवाक और सूक्त। पूरा ऋग्वेद आठ भागों में विभक्त है जिसे अष्टक कहा जाता है और प्रत्येक अष्टक में आठ अध्याय हैं अतः पूरे ऋग्वेद में आठ अष्टक व चौंसठ अध्याय हैं। सम्भवतः यह विभाग पाठ्यक्रम की दृष्टि से किया गया है, पर इसका विभाग ऐतिहासिक और महत्त्वपूर्ण है। इस विभाग में समग्र ऋग्वेद दस खण्डों में विभक्त है जिन्हें मण्डल कहा

जाता है और मण्डल में संग्रहीत मन्त्र समूह को सूक्त कहते हैं। इन सूक्तों के खंडों को ऋचायें कहते हैं तथा ऋग्वेद में सूक्तों की संख्या 1028 और मन्त्रों की संख्या 10,580 है।

यद्यपि ऋग्वेद की शाकल, बाष्कल, आश्वलायन, सांख्यायन और मांडूकायन नामक पाँच शाखाएँ प्रसिद्ध हैं पर इनमें से इस समय केवल प्रथम 'शाकल' शाखा ही उपलब्ध है। ऋग्वेद के मंत्र 14 प्रकार के प्रमुख छन्दों में निबद्ध हैं। इसका रचना काल 2500 से 8500 ई० पूर्व माना जाता है।

'ऋक्' शब्द का मूलार्थ है, जिससे स्तुति की जाय। इसलिए ऋचा या सूक्त में जिस विषय या पदार्थ की स्तुति, वर्णन या प्रतिपाद्य होता है, उसका वह देवता कहलाता है। इस पारिभाषिक अर्थ के कारण देवता-रूप से प्रसिद्ध इन्द्र, वरुण, अग्नि आदि के साथ-साथ सूक्तों में वर्णन किये गये ज्ञान, संज्ञान, कृषि, अक्ष आदि को भी उनका देवता कहा जाता है। ऋचा या सूक्त का अभिप्राय ऋषि शब्द से भी है। ऋषि उनको कहते हैं जिन्होंने वेद-मन्त्रों का साक्षात्कार किया था। ऐसा प्रतीत होता है कि मन्त्रों के बनाने वाले को ही ऋषि कहा जाता है। इन मन्त्रों के द्रष्टा ऋषियों के नाम क्रम से इस प्रकार हैं— गृत्समद, विश्वामित्र, वामदेव, अत्रि,

भारद्वाज, वशिष्ठ एवं उनका परिवार और कण्व ऋषि के वंशज।

ऋग्वेद का अर्थ है— ऋचाओं का वेद। ऋचायें अन्य वेदों में भी हैं पर ऋग्वेद में केवल ऋचाओं का ही संग्रह है। ऋचा से स्तुति की जाती है। जिनकी स्तुति की जाती है उनको देवता कहते हैं। अभिप्राय यह हुआ कि इन संहिताओं में केवल देवताओं की स्तुतियाँ हैं।

ऋग्वेद का प्रतिपाद्य विषय है पृथ्वी, अंतरिक्ष अथवा द्युलोक में रहनेवाले देवताओं की महिमा का गान एवं विभिन्न फलों की सिद्धि के लिए स्तुति करना। यह कार्य छन्दों के द्वारा हुआ है जिसका अर्थ होता है मनुष्यों को प्रसन्न करनेवाला, यज्ञादि की रक्षा करने वाले देवताओं की स्तुति। वैदिक देवता क्रमशः पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक से सम्बन्ध रखने के कारण तीन प्रकार के माने जाते हैं।

अग्नि, सोम, पृथ्वी आदि पृथ्वी स्थानीय कहलाते हैं।

इन्द्र, रुद्र, वायु आदि अन्तरिक्ष स्थानीय और वरुण, मित्र, उषस, सूर्य आदि द्युस्थानीय।

ऋग्वेद में लगभग 250 सूक्तों में इन्द्र की, लगभग 200 सूक्तों में अग्नि की और 100 से अधिक सूक्तों में सोम की स्तुति की गयी है, यम, मित्र, वरुण, रुद्र, विष्णु आदि देवताओं के भी सूक्त हैं। इसमें मनु, श्रद्धा के व्यक्तित्व एवं सुन्दर गम्भीर दार्शनिक

प्रचार में भी प्रस्तुत किये जाते हैं।

ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक दृष्टि से ऋग्वेद संहिता का महत्त्व सर्वोपरि एवं अविस्मरणीय है। ऋग्वेद की ऋचाओं में विश्व का प्राचीनतम इतिहास सुरक्षित है जो मानव जाति की उपलब्धि है। अतः ऋग्वेद समकालीन आर्य सभ्यता एवं संस्कृति का बड़ा ही भव्य चित्र प्रस्तुत करता है। तत्कालीन आर्य नगर सभ्यता के हिमायती नहीं थे वे वन्य संस्कृति के उपासक थे जो उनके चिंतन प्रधान स्वभाव के विशेष अनुकूल थी। पर सभ्यता के अन्य मापदण्डों पर वे बहुत आगे बढ़े हुए थे। खेत जुताई, हल, सीत-जुँवाठ, हँसिया, चर्म रज्जु, गोशाला, नारि, काष्ठ-पात्र, पत्थर की कुल्हाड़ी, लौह-पात्र, गाड़ी, रथ आदि के निर्माण में वे बड़े कुशल थे।

यजुर्वेद-संहिता ऋग्वेद के बाद यजुर्वेद का नाम आता है। यजुष (यजुः) शब्द का अर्थ होता है पूजा एवं यज्ञ। यजुर्वेद मंत्रों का प्रतिपाद्य विषय यज्ञ विधियों को सम्पन्न कराना ही मूलतः यजुर्वेद का सम्बन्ध यज्ञानुष्ठान से है और उसमें संकलित मन्त्रों का विषय यज्ञ विधियों का सम्पादन करना है। किस यज्ञ में किस कांड के मन्त्रों का व्यवहार किया जाना चाहिए, इसकी विधियाँ यजुर्वेद में दी गयी हैं। अतः यह वेद कर्मकांड प्रधान है।

महाभाष्यकार पतंजलि के समय यजुर्वेद संहिता 101 शाखाओं में पायी जाती थी। अन्य ग्रंथों में इन शाखाओं की संख्या, अपने-अपने समय के अनुसार, 101 से कम या अधिक बतलाई गयी है। परन्तु आजकल केवल पाँच शाखाएँ या संहिताएँ छपी हुई प्राप्त होती हैं।

आदिकाल से यजुर्वेद-संहिता के शुक्ल और कृष्ण नामों से दो भेद चले आ रहे हैं। उपर की शाखाओं का समावेश इन्हीं दो भेदों में माना जाता है। इस प्रकार कुछ शाखाओं का सम्बन्ध शुक्ल यजुर्वेद से और कुछ का कृष्ण यजुर्वेद से रहा है। छपी हुई पाँच शाखाओं में से तीन (तैत्तिरीय, मैत्रायणी और कठ) का सम्बन्ध कृष्ण यजुर्वेद से, और दो (माध्यन्दिन और काण्व) का शुक्ल यजुर्वेद से है। इन दोनों (शुक्ल यजुर्वेद और कृष्ण यजुर्वेद) भेदों में वास्तविक दृष्टि से परस्पर यही अन्तर है कि जहाँ शुक्ल यजुर्वेद में केवल मन्त्र का समावेश है, वहाँ कृष्ण यजुर्वेद में मन्त्र-भाग और ब्राह्मण-भाग दोनों का समावेश मिला जुला है।

वेदों की पद्यात्मक (ऋचाओं के रूप में) या गद्यात्मक रचनाओं को, जिनको प्रायः याज्ञिक कर्मकांड में पढ़ा जाता है, मन्त्र कहते हैं। ब्राह्मण एक तरह से मन्त्र आदि पर व्याख्यात्मक रचना या ग्रंथ को कहते हैं। मन्त्र और ब्राह्मणों के स्वरूपों में मौलिक अन्तर है। ऐसा मालूम होता है कि इन्हीं मन्त्रों और ब्राह्मण के भागों के सम्मिश्रण के कारण यजुर्वेद के एक भेद को कृष्ण और जिसमें ऐसा मिश्रण नहीं है उसे शुक्ल कहा जाने लगा।

दोनों में कृष्ण यजुर्वेद को प्राचीन और शुक्ल यजुर्वेद को नवीन समझा जाता है।

शुक्ल यजुर्वेद में काण्वशाखीय संहिता की अपेक्षा माध्यन्दिन शाखा की यजुर्वेद-संहिता का कहीं अधिक प्रचार है। कहा तो यह जाता है कि माध्यन्दिन शाखा की यजुर्वेद-संहिता का जितना प्रचार और विस्तार भारत में है, उतना किसी अन्य शाखा का नहीं है।

माध्यन्दिन शाखावाली शुक्ल यजुर्वेद-संहिता में 40 अध्याय और 1975 कण्डिकाएं (या मन्त्र) हैं। मन्त्रों की संख्या के बारे में मतभेद भी है। इस संहिता में गद्यात्मक मन्त्रों (यजुष) के साथ-साथ ऋचाएँ भी मिलती हैं। संहिताओं का लगभग आधा भाग ऋचाओं का ही होगा। इन ऋचाओं में से 700 से अधिक ऋग्वेद में भी पायी जाती है।

यजुर्वेद-संहिता का क्रम विशेष याज्ञिक कर्मकाण्ड का क्रम लक्ष्य में रखकर निर्धारित किया गया है। जैसे प्रथम अध्याय से द्वितीय अध्याय के 28वें मन्त्र तक 'दर्श पूर्णमास' नामक यज्ञ का प्रसंग आया है। इसी प्रकार अगले भागों में पिण्डपितृयज्ञ, अग्निहोत्र, चातुर्मास्य आदि वैदिक यज्ञों से सम्बन्ध रखने वाले मन्त्रों का संग्रह है। केवल अन्त में 40वें अध्याय का सम्बन्ध कर्मकाण्ड से न होकर ज्ञानकांड (उपनिषद्) से है।

यजुर्वेद का ऐतिहासिक महत्त्व विशेष

रूप से वर्तमान युग में उपादेय है। यजुर्वेद में विषय-वस्तु की [illegible] पर भले ही आकर्षित नहीं हो पाते पर उनकी अर्थकोंडी विश्वासों पर से मन को मोड़ा नहीं जा सकता। इस वेद में मनुष्य जगत के कल्याण हेतु जो भी मोती सँजोये हुए हैं वह हमारे सभ्यता की अमूल्य निधि है। रोग, शोक, औषधि, चिकित्सा, जय-विजय, दीर्घायु आदि सम्बन्धी प्रचलित कर्म मानव कल्याण हेतु कितना आवश्यक हो सकता है, हर व्यक्ति स्वयं कल्पना कर सकता है। यही कारण है कि किसान अपने बैलों से बातें करते हैं, वैद्य अपने अपने औषधियों से सलाह लेते हैं, देश-भक्त अपनी मातृभूमि से बातें करते हैं तथा और वीर अपनी तलवार से बात कर सकता है। इस वेद के मंत्रों द्वारा उन देवताओं या मानव कल्याणकारी देवदूतों हमारे पूर्वजों को धन्यवाद देते हैं जिन्होंने हमारे वातावरण को मोहक बनाया है। उन्हीं की कृपा से मानव जगत उत्तरोत्तर विकास पथ पर अग्रसर है।

सामवेद संहिता – यजुर्वेद के पश्चात सामवेद आता है। साम का अर्थ होता है – सुन्दर, सुखकर वचन। साम का अर्थ संगीत या गान भी है। संगीत विद्या को सर्वाधिक सुखकर, आनन्ददायक माना गया है। साम का गान करने वाला उद्गाता कहा जाता है। उद्गाता यज्ञ के अवसरों पर अन्य वेदों की ऋचाओं के साथ सामवेद की संगीत प्रधान

ऋचाओं का गायन सुख और देवताओं को प्रसन्न करना था जो कल्याण की वृष्टि करते थे।

वेद में तीन प्रकार के मंत्र हैं - ऋचाएँ, यजुष और सामगीत। ऋचाएँ भी दो प्रकार की हैं - गेय और अगेय। सामवेद में गेय ऋचाएँ और गेय यजुष दोनों ही हैं। सामवेद के ऋचा समूह को आर्चिक और यजुष समूह को स्तोभ कहते हैं। महाभाष्य में सामवेद की एक सहस्र शाखाओं का उल्लेख मिलता है। परन्तु आजकल केवल कौथुम, राणायनीय और जैमिनीय केवल तीन शाखाएँ मिलती हैं, सामवेद की राणायनीय संहिता में, जो सबसे अधिक प्रसिद्ध है, 1549 ऋचाएँ हैं। इनमें से 75 को छोड़कर शेष ऋग्वेद से ली गयी हैं।

सामवेद के दो भाग हैं, पूर्वार्चिक और उत्तरार्चिक। पूर्वार्चिक में छः भाग हैं और उत्तरार्चिक में नौ भाग। यों सामवेद का ~~विशेष~~ विशेषरूप से अपना प्रतिपाद्य विषय कुछ नहीं है। ऋचाओं के द्वारा जो विभिन्न देवताओं की स्तुति होती है वही उसका प्रतिपाद्य विषय कहा जा सकता है। पर ध्येय उसका सामगान ही है। सामगान की दृष्टि से एक विशेष वेद की कल्पना में हमारे पूर्वजों की उदात्त मनोवृत्ति प्रकट होती है।

संगीत शास्त्र के विकास की दृष्टि से सामवेद का महत्व अक्षुण्ण है। आचार्य भरत ने अपने नाट्य शास्त्र में नाट्य की उत्पत्ति के विषय में कहा है कि नाट्य के निर्माण के लिए ब्रह्मा ने सामवेद से गीति तत्व को ग्रहण किया।

अथर्ववेद-संहिता :- अथर्ववेद की गणना पहले वेदों में नहीं की जाती थी और वेद को त्रयी कहा जाता था। चौथा वेद अथर्ववेद, अन्य तीनों वेदों - ऋग्वेद, यजुर्वेद व सामवेद - से न केवल अर्वाचीन है अपितु विषय-वस्तु आदि की दृष्टि से भी वह उनसे बहुत कुछ भिन्न है। कहा जाता है कि अथर्वा नामक ऋषि के नाम से अथर्ववेद का नामकरण हुआ है।

विषय की दृष्टि से अथर्ववेद को अथर्वन और आँगिरस इन दो भागों में विभक्त किया जाता है। जितने भी मन्त्र-तन्त्र, टोना-टोटका एवं औषधियों के प्रतिपादक मन्त्र हैं, उन्हें अथर्वन भाग के अन्तर्गत और मारण-उच्चाटन विषयक मन्त्रों को आँगिरस भाग के अन्तर्गत माना जाता है। मन्त्र, औषधि और उच्चाटन-विषयक मन्त्रों के अतिरिक्त अथर्ववेद की कुछ ऋचाएँ यज्ञ सम्बन्धी और कुछ ब्रह्म विद्या विषयक भी हैं। ब्रह्मविद्या के प्रतिपादक मन्त्र होने के कारण अथर्ववेद के एक ~~ब्रह्मवेद भी है~~ ब्रह्मवेद भी है, इस नामकरण का एक आधार यह भी है कि अथर्ववेद के शाप, वशीकरण, मोहन, मारण, उच्चाटन, आशीर्वाद, स्तुति और प्रार्थना विषयक जितने भी समस्त मन्त्र हैं उन्हें ब्राह्मणि भी कहा जाता है।

महाभाष्यकार के समय में अथर्ववेद की नौ शाखाएँ पायी जाती थीं। पर आज दो ही शाखाएँ मिलती हैं - शौनक और पैप्पलाद। दोनों में से शौनक शाखा की संहिता अधिक प्रसिद्ध है। अथर्ववेद

16 August Friday

की शौनक शाखा में 20 काण्ड (भाग), 730 सूक्त और लगभग 6000 मन्त्र हैं। इन मन्त्रों में से 1200 मन्त्र स्पष्ट ही ऋग्वेद संहिता से लिये हुए मालूम होते हैं उनमें कुछ पाठान्तर अवश्य हैं। अथर्ववेद का 20 वाँ काण्ड तो, कुछ ही अंश को छोड़कर पूरा का पूरा ऋग्वेद से लिया गया है।

कई दृष्टियों से अथर्ववेद-संहिता की अपनी विशेषता है। मुख्य विशेषता यह है कि जहाँ ऊपर की तीनों संहिताओं का संबंध श्रौत यज्ञों से है। वहाँ अथर्ववेद का (20 वें काण्ड को छोड़कर) सम्बन्ध प्रायः गृह कर्मकांड (जन्म, विवाह या मृत्यु संबंधी संस्कार आदि) या राजाओं के मूर्धाभिषेक - सम्बन्धी कर्म-काण्ड से है। इसके अलावे ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, राजविद्या, अध्यात्मविद्या आदि महत्वपूर्ण विषयों के अनेक सूक्त भी अथर्ववेद में पाये जाते हैं।

भारतीय समाज के विकास एवं समाज-शास्त्रीय विश्लेषण की दृष्टि से अथर्ववेद के दोनों ही भागों का अपरिसीम महत्व है। भाव गाम्भीर्य एवं काव्यात्मक गरिमा अथर्ववेद में देखा जा सकता है माता-पिता, भाई-बहन, पुत्र-पुत्री के सद्चरित्रता की शिक्षा एवं एक दूसरे के प्रति अधिकार और कर्तव्य की शिक्षा। का खजाना अथर्ववेद में ही है। मातृभूमि के प्रति वीरों का कर्तव्य और वीरों के प्रति मातृभूमि के स्नेह की असीम कल्पना अथर्ववेद में सुरक्षित है।